ISSN - 2229-3620
APPROVED UGC CARE
SID

SHODH SANCHAR BULLETIN
Vol. 10, Issue 39, July-September 2020
Page Nos. 1-4

AN INTERNATIONAL BILINGUAL PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

आज का भारत और तुलसी का समाज-दर्शन

डॉ0 अनिल कुमार राय*

शोध सारांश

वर्तमान युग घोर आर्थिक, यांत्रिक एवं बाज़ारवादी युग है। मानवीय मूल्यों एवं संवेदनाओं का निरंतर हो रहा क्षरण आज के समाज के समक्ष सबसे बड़ा संकट बनकर खड़ा हुआ है। अतीत की पड़ताल करते हुए हम पाते हैं कि तुलसी का मध्यकालीन समाज भी मूल्य–क्षरण के गंभीर संकट से आक्रांत था। उस युग की सामाजिक विषमताओं का विस्तृत अंकन उन्होंने कलिकाल के वर्णन में किया है। समाज को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देने वाले कवि के रूप में तुलसीदास की भूमिका को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। इस मर्म को आधुनिक युग में सबसे पहले गाँधी ने समझा था। तुलसी का काव्य समाज में व्याप्त सभी प्रकार की विषमताओं के प्रतिरोध एवं लोकमंगल की प्रतिष्ठा का काव्य है। 'रामराज्य' की परिकल्पना तुलसी के काव्य की एक बड़ी उपलब्धि है। उनका काव्य प्रत्येक युग में समाज को बहुस्तरीय आपदाओं से उबारने एवं लोक–उत्थान की ओर ले जाने में सक्षम है।

Keywords : वैश्वीकरण, बाज़ारवाद, उपभोक्तावाद, रामकथा, रामराज्य, संयुक्त परिवार, सामाजिक–पारिवारिक मूल्य, लोकमंगल।

इक्कीसवीं सदी में प्रविष्ट हुए हमें लगभग बीस वर्ष हो चुके हैं। भारत के लिए यह सदी कई दृष्टियों से अहम् है। वैश्वीकरण का प्रभाव आज समूचे विश्व और मानव समाज पर पड़ा है। बाहर से 'वसुधैव कुटुंबकम' के आदर्श का प्रचार करने वाली यह अवधारणा मूलतः पश्चिमी स्वार्थ की बुनियाद पर निर्मित हुई थी। आज वैश्वीकरण ने पूरे विश्व को एक विशाल बाजार और समूची मानव जाति को उपभोक्ता बना कर छोड़ दिया है। इसके प्रभावस्वरूप मनुष्य के भीतर उपभोग की अदम्य लिप्सा अपने चरम पर है। अंग्रेजों का मुख्य उद्देश्य भारत से धन लूटना था किंतु उनकी संस्कृति और अंग्रेजियत ने भारतीय संस्कृति को सर्वाधिक नुकसान पहुँचाया। इसीलिए गाँधीजी ने अंग्रेजों से अधिक अंग्रेजी सभ्यता का विरोध किया था। वे भौतिक समृद्धि को ही सभ्यता कहते थे। उन्होंने अंग्रेजी सभ्यता के विषय में 'हिंद स्वराज' में लिखा–''उसमें नीति या धर्म की बात ही नहीं है। सभ्यता के हिमायती साफ कहते हैं कि उनका काम लोगों को धर्म सिखाने का नहीं है.....फिर भी मैं आप से बीस वर्ष के अनुभव के बाद कहता हूँ कि नीति के नाम से अनीति सिखलायी जाती है।.....शरीर का सुख कैसे मिले यही आज की सभ्यता ढूँढती है, और यही देने की कोशिश करती है।''[1] गाँधी का यह वक्तव्य जितना आज से सौ–डेढ़ सौ साल पहले के संदर्भ में सच था उतना ही आज के संदर्भ में भी। आज अधिक से अधिक धन–प्राप्ति की अदम्य लिप्सा और घोर उपभोगवाद समाज को संवेदनहीन बनाने की ओर निरंतर अग्रसर है। इस दृष्टि से यदि तुलसी के समकालीन समाज को देखा जाय, जिसका वर्णन उन्होंने उत्तरकांड में किया है, तो आज की सामाजिक विषमताएँ उनसे कम नहीं हैं जितनी उस युग में थीं। वर्तमान समय और परिस्थितियों के अनुरूप उनका स्वरूप अवश्य बदल गया है। निस्संदेह तुलसी की रामकथा उस युग के लिए सर्वथा उपयोगी और संजीवनी के समान थी। यदि गौर से देखा जाए तो अतिशय भौतिकता, आर्थिकता एवं यांत्रिकता के इस युग में समाज के सामने मानवीय संवेदना को बचाये रखने की एक बहुत बड़ी चुनौती है। रामकथा इस चुनौती से टकराने का संबल है। यह सामाजिक–पारिवारिक मूल्यों के क्षरण को कम करने का सशक्त साधन है। तुलसी की रामकथा का जितना महत्त्व इसकी आध्यात्मिकता के कारण है उससे कहीं अधिक सामाजिकता के कारण है। सबसे बड़ी बात यह है कि तुलसी का भक्ति–दर्शन कहीं भी समाज से कटा हुआ नहीं है। उनकी रामकथा की शुरुआत ही जगत के दुःख–दारुण्य और प्रभु द्वारा इसके निदान के प्रयास से हुई है–

मंगल करनि, कलि मल हरनि, तुलसी कथा रघुनाथ की।
गति कूर कविता सरित की ज्यों, सरित पावन नाथ की।।[2]

तुलसी जिस देशकाल में रह रहे थे उसमें असत्य और अधर्म का बोलबाला था। सत्य और धर्म के मार्ग पर चलने वालों का जीवन संघर्षों से भरा हुआ था। बालकांड की यह चौपाई अपने भीतर कथात्मक संदर्भ को लेकर चलती हुई काफी हद तक

*एसोसिएट प्रोफेसर – हिंदी विभाग, श्यामलाल कॉलेज सांध्य, दिल्ली विश्वविद्यालय

मध्यकाल के यथार्थ को भी अभिव्यक्त करती है–

देखत जग्य निशाचर धावहिं। करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं।।

गाधि तनय मन चिंता व्यापी। हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी।।[3]

तुलसीदास जब अपने समकालीन समाज की विसंगतियों को देखकर व्यथित होते हैं तो उसके उत्थान हेतु रामराज्य की एक वैकल्पिक व्यवस्था तैयार करते हैं,जो संपूर्ण विश्व साहित्य में अद्‌भुत है। उनके समकालीन समाज में मनुष्य–मनुष्य में बैर है। लोग भूख से मर रहे हैं। नीच कर्मों के कारण लोगों को नाना दुःखों को भोगना पड़ता है। किंतु उनके तलाशे हुए रामराज्य में राम का प्रताप ही ऐसा है कि इसमें कोई भी सामाजिक विकृति ठहर नहीं पाती–

रामराज बैठे त्रय लोका। हरसित भयउ गयउ सब सोका।।

बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप विसमता खोई।।

सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।

नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना।।4

आधुनिक युग में गाँधी ने जिस रामराज्य और सर्वोदय का स्वप्न देखा था उसके विचार की प्रेरणा उन्हें तुलसीदास से ही प्राप्त हुई थी। तुलसी का रामराज्य नैतिक मूल्यों द्वारा निर्मित एक वैकल्पिक समाज की रचना है। तुलसीदास ने एक और बात की ओर संकेत किया है कि रामराज्य केवल घोषणा करके नहीं लाया जा सकता है। उसके लिए पूरे राज्य की जनता और शासक को मिलकर संघर्ष और साधना करनी होगी। तुलसी की सामाजिक दृष्टि मानवतावादी है। उनके लिए राम ही सब कुछ हैं। राम का जन्म अधर्म और अन्याय के नाश एवं समाज में उच्चतर मूल्यों की स्थापना के लिए हुआ है–

असुर मारि थापहिं सुरन्ह, राखहिं नर श्रुति सेतु।

जग बिस्तारहिं विसद जस, रामजन्म कर हेतु।।[5]

तुलसी के राम मर्यादावादी हैं जो सत्य और धर्म के आसन से कभी उतरते नहीं हैं। रामराज्य में जिस सामाजिक समता की बात कही गयी है वह कोई मार्क्सवादी वर्ग–संघर्ष के परिणाम जैसा नहीं है। उस समाज में किसी के प्रति किसी का बैर नहीं है। वह पूरी तरह मानवीय मूल्यों से बँधा हुआ समाज है। गाँधी भी तुलसी की पारंपरिक वर्णव्यवस्था के समर्थक थे, किंतु उनकी वर्णव्यवस्था परिवर्तनशील थी। उस व्यवस्था का आधार जन्म नहीं अपितु कर्म है। गाँधी में यह विचार आधुनिक बुद्धिवाद के प्रभाव के कारण है। किंतु एक बात दोनों में देखी जाती है और वह है कि दोनों नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना द्वारा समाज का नवनिर्माण करने की आकांक्षी थे।

भारतीय समाज की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ईकाई परिवार है। मानव–जीवन के सामाजिक बंधन का आधार भी परिवार ही होता है जो रामचरितमानस में काफ़ी जगह मिली है। तुलसी ने आदर्श समाज और आदर्श परिवार की परिकल्पना केवल सैद्धांतिक दायरे में ही नहीं की है बल्कि उनकी चिंता अपने समकालीन समाज को शिवत्व के मार्ग पर ले जाने की है। आज के समाज में जो भी विषमताएँ व्याप्त हैं उनकी बुनियाद मूलतः परिवार में ही निर्मित होती है, तुलसी इस तथ्य से पूरी तरह अवगत हैं। मनुष्य को सबसे पहला प्रशिक्षण उसके परिवार में ही प्राप्त होता है। माता–पिता के वचन के प्रति अनुराग रखने वाला पुत्र ही सबसे अधिक भाग्यशाली होता है–'सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी। जो पितु–मातु बचन अनुरागी।' तुलसी के यहाँ कुल–परिवार की मर्यादा तथा माता–पिता के आदेश–पालन की जो महत्ता स्थापित है वह अन्यत्र दुर्लभ है। जिस माता ने राजतिलक के बदले वनवास देने की ज़िद की उसी के प्रति राम के मन में सर्वाधिक प्रेम समूचे विश्व में अनूठा है। यह इस बात का ठोस प्रमाण है कि त्याग की भावना ने ही राम के चरित्र को इतना उदात्त बनाया है। जिस माँ की कोख से राम ने जन्म लिया है वे स्वयं भी त्याग की प्रतिमूर्ति हैं। राम को वनवास दिये जाने से कौशल्या को निश्चित रूप से ठेस पहुँची होगी किंतु उन्होंने पुत्र राम को जो संस्कार दिये हैं वे सर्वोपरि हैं। तभी तो पिता द्वारा राम को वनवास दिये जाने की खबर सुनकर वे राम से कहती हैं–'जो पितु–मातु कहेउ वन जाना। तो कानन सत अवध समाना।।' यदि माता–पिता ने राम को गृह–त्याग का आदेश दिया है तो वह उनके कल्याण के लिए ही होगा। इसमें संदेह की कोई गुंजाइश ही कहाँ रह जाती है। वन का जीवन अब राम के लिए अवध जैसे सैकड़ों राज्य के समान होगा। कौशल्या के उक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि जिस पुत्र की माँ विलक्षण त्याग की प्रतिमूर्ति हों उसके पुत्र को ऐसे संस्कार भला कैसे नहीं प्राप्त होते। सत्ता और साम्राज्य को ठोकर मारकर माता–पिता के आदेश–पालन का कर्त्तव्य–बोध राम को एक कालजयी चरित्र बना देता है। तुलसी द्वारा प्रस्तुत रामकथा प्रत्येक युग में अपनी राह से भटके समाज को सद्‌मार्ग पर लाने की अपार क्षमता रखती है।

संयुक्त परिवारों के टूटने का संकट तुलसी के समाज में भी था। आज की स्थिति तो और भी भयावह है। परिवार का दायरा सिमटकर व्यक्ति के 'स्व' तक पहुँचने को है। इसी संकट से जूझते हुए तुलसी ने अपनी रामकथा में राम के परिवार के रूप में आदर्श परिवार की रचना की है। समाज में पारिवारिक मूल्यों के क्षरण की चिंता तुलसी को इस हद तक व्यथित करती है कि उन्हें लिखना पड़ता है–

नारिहिं बस नर सकल गुसाईं। नाचहिं नर मर्कट की नाईं।।[6]

.....

.....

ससुरारि पियारि लगी जब तक, रिपुरुप कुटुंब भई तब तक।[7]

तुलसी ने सामाजिक–राजनीतिक मूल्यों की स्थापना के लिए जिस रामराज्य की रचना की है, उसकी व्यावहारिकता पर भी समय–समय पर सवाल खड़े होते रहे हैं। साहित्यिक आदर्शों को व्यावहारिक धरातल पर ज्यों का त्यों उतारना संभव भी नहीं होता, किंतु वे समाज को प्रभावित करने में सफल अवश्य होते हैं। रामचरितमानस इसका सबसे सशक्त उदाहरण है। तुलसी जब समाज में उच्च आदर्शों की कथा को अभिव्यक्त करते हैं तो इसके साथ ही वे चरित्रों के माध्यम से समाज को सत्य और न्याय के मार्ग पर चलने की प्रेरणा भी देते हैं। वे संकेत करते चलते हैं कि जो समाज इस मार्ग पर चलेगा वही रामराज्य बन जाएगा। प्रजा रोग, व्याधि, दैन्य, दरिद्रता आदि के संकटों से मुक्त होगी। रामकथा के नायक के जीवन में एक ही स्त्री है और अपने आचरण से वे समूचे राज्य के आदर्श हैं इसलिए तुलसी कहते हैं–'एक नारीव्रत रख सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी।।[8]

सृष्टि के निर्माण के साथ ही इसें शुभ–अशुभ, मंगल–अमंगल, सज्जन–दुर्जन दोनों ही पक्षों का बराबर अस्तित्व रहा है। दोनों ही जीवन और जगत के ऐसे यथार्थ हैं जिन्हें अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इसीलिए तुलसी ने मानस में केवल सज्जनों की ही वंदना नहीं की है। दुर्जनों का उन्होंने विशेष रूप से स्मरण किया है। उनके लक्षण बताते हुए वे कहते हैं–

जे पर दोष लखहिं सहसाखी। पर हित घृत जिन्ह के मन माखी।।

बचन बज्र जेहि सदा पियारा। सहस नयन पर दोष निहारा।।

पर अकाजु लगि तनु परिहरहीं। जिमि हिम उपलकृषी दलि गरहीं।।[9]

इस संदर्भ में सबसे विलक्षण बात तो कवि ने सज्जन और दुर्जन का भेद बताते हुए कही है–'बिछुरत एक प्रान हरि लीन्हीं। मिलत एक दुःख दारुन दीन्हीं।। तुलसी को इस बात में कोई संदेह नहीं है कि व्यक्तिगत संयम और त्याग के द्वारा ही एक स्वस्थ समाज की रचना की जा सकती है। उनके इस विचार ने आधुनिक युग में गांधी को भी बहुत दूर तक प्रभावित किया है। स्वातंत्र्योत्तर भारत जिस संधिान को लागू किया गया उसमें भी इस प्रकार के नैतिक–सामाजिक मूल्यों को समाविष्ट करने का पूरा प्रयास किया गया।

तुलसी के काव्य में अनेक ऐसे स्थल हैं जहाँ उनके द्वारा नारी–निंदा के प्रसंग आये हैं। मानस के असंख्य पुरूष पात्रों द्वारा जगह–जगह पर नारी की प्रकृति के प्रति अश्विास व्यक्त हुआ है। वस्तुतः नारी विषयक यह दृष्टि समूचे मध्यकाल की है। यही कारण है कि मानस के अयोध्यावासियों के भीतर भी यह धारणा बहुत गहराई तक व्याप्त है–'सत्य कहहिं कबि नारि सुभाऊ /सब बिधि अगमु अगाध दुराऊ।' फिर चाहे भरत द्वारा स्त्री को 'सकल कपट अघ अवगुन खानी' कहना हो अथवा शबरी द्वारा स्वयं को 'अधमों में अधम' माननना हो, समुद्र द्वारा नारी को ढोल, गंवार, शूद्र और पशु की श्रेणी में रखकर उसे पीटने के योग्य माननना हो अथवा राम द्वारा स्वयं उसे साक्षात् माया–मूर्ति समझना हो सर्वत्र ही मध्यकालीन समाज की सोच प्रभावी दिखायी पड़ती है। इन्हीं प्रसंगों का हवाला देकर तुलसी पर स्त्री–विरोधी होने का आरोप सदैव लगता रहा है। इस आरोप से उन्हें बचाने का कार्य आचार्य शुक्ल बड़ी चतुराई से करते हैं और कहते हैं कि उन्होंने वैराग्य–भावना में पड़कर ही इस तरह की उक्तियाँ कहीं हैं। वे लिखते हैं–''उन पर स्त्रियों की निंदा का महापातक लगाया जाता है, पर यह अपराध उन्होंने अपनी विरति की पुष्टि के लिए किया है। उसे उनका वैरागीपन समझना चाहिए। सब रूपों में स्त्रियों की निंदा उन्होंने नहीं की है। केवल प्रमदा या कामिनी के रूप में, दांपत्य रति के आलंबन के रूप में की है–माता, पुत्री भगिनी आदि के रूप में नहीं। इससे सिद्ध होता है कि स्त्री जाति के प्रति उन्हें कोई द्वेष नहीं था।.....अतः स्त्रियों के संबंध में गोस्वामीजी ने जो कहा है, वह सिद्धांत वाक्य नहीं है, अर्थवाद मात्र है।''[10] हम पाते हैं कि मानस में जब भी तुलसी के प्रिय नारी पात्रों कौशल्या, सुमित्रा, सीता और मंदोदरी आदि के प्रसंग आते हैं तो इनके समक्ष वे स्वतः ही श्रद्धा से झुक जाते हैं। यह देखकर आचार्य शुक्ल द्वारा तुलसीदास का किया गया बचाव काफी हद तक ठीक भी जान पड़ता है।

तुलसी का रामराज्य राजतंत्र का समर्थक और प्रजातंत्र का विरोधी नहीं है। वे जब रामराज्य का वर्णन करते हैं तो वहाँ भी वे एक साथ दो लक्ष्य लेकर चलते हैं। पहला यह कि कोई भी राजा तभी स्वीकार्य या सफल हो सकता है जब उसके राज्य में प्रजा सुखी हो। दूसरा यह कि जब तक प्रजा सत्य, धर्म और न्याय के मार्ग का अनुसरण नहीं करेगी, केवल राजा के चाहने से रामराज्य नहीं आ सकता। मध्यकालीन भारत में तुलसी द्वारा प्रजातंत्र की बात करना तो संभव नहीं था किंतु राम के राज्य को जनतांत्रिक अथवा लोकतांत्रिक बनाने का प्रयास उन्होंने अवश्य किया है। प्रजा की महत्ता को रेखांकित करते हुए उन्होंने राम से कहलवाया है–'जौं अनीति कछु भाखहुँ भाई। तो मोहिं बरजहुँ भय बिसराई।।' यहाँ राम साफ–साफ कहते हैं कि त्रुटि किसी से भी हो सकती है। राजा से भी। जनता को अधिकार है कि यदि मुझसे कोई अन्याय अथवा अनीति होती है तो वह मुझे तुरन्त टोके। आचार्य रामचंद्र शुक्ल तुलसी के रामराज्य के विषय में लिखते हैं–''राजा के पारिवारिक और व्यावहारिक जीवन को देखने की मजाल प्रजा में थी। देखने की ही नहीं उस पर टीका–टिप्पणी करने की भी। राजा अपने पारिवारिक जीवन में भी यदि कोई ऐसी बात पावे जो प्रजा को देखने में न अच्छी लगती हो तो उसका

सुधार आदर्श–रक्षा के लिए कर्त्तव्य माना जाता था।''[11] तुलसी के युग में सत्ता की जी–हुजूरी बड़ी सामान्य सी बात थी। आज के परिप्रेक्ष्य में भी यह बात उतनी ही सत्य है। सत्ता का कृपापात्र बनने के लिए लोग बड़े से बड़े आदर्श और सिद्धांत को ताक पर रख देते हैं। आज के साहित्यकारों को तुलसी और कुम्भनदास जैसे संतों से बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता है। तुलसी ने सत्ता की मनसबदारी को अस्वीकार करते हुए कहा–

हम चाकर रघुवीर के पटौ लिखौ दरबार।
तुलसी अब का होहिंगे, नर के मनसबदार।।

तुलसीदास की कविता सामाजिक विषमताओं के प्रतिरोध की कविता है। उन्हें वर्णवादी, स्त्री–विरोधी इत्यादि कहकर कठघरे में खड़ा करना उचित नहीं है। मूलतः वे कोई समाज सुधारक नहीं हैं बल्कि एक समर्पित वैष्णव भक्त हैं। उन्होंने अपने समकालीन समाज में श्वेत–श्याम, भला–बुरा इत्यादि का आकलन एक भक्त के विवेक से ही किया है। उनकी भक्तिधारा में तमाम तरह की सामाजिक विषमताओं को बहा ले जाने की असीम क्षमता है। यह तुलसी का ही रामराज्य है जिसमें सरयू नदी के एक ही घाट पर चारों वर्ण के लोग स्नान करते हुए देखे जा सकते हैं–'राजघाट सब बिधि सुंदर बर। मज्जहिं तहां बरन चारिउ नर।'

समग्रतः तुलसी की रामकथा लोक–जीवन में उपस्थित विभिन्न विषमताओं से मुक्ति की राह दिखाती है। आज देश और समाज में जहाँ कहीं भी अन्याय या अधर्म हो रहा है, 'मानस' इन सब के प्रतिरोध का साहित्य है। मध्यकाल में अपने समकालीन राज्य को हेय दिखाते हुए रामराज्य के द्वारा एक वैकल्पिक राज्य और समाज की रचना तुलसी ही कर सकते थे। घोर आर्थिकता और यांत्रिकता में डूबे हुए आज के संवेदनहीन होते समाज में तुलसी की रामकथा स्वतः उपादेय सिद्ध होती है।

सन्दर्भ :–

1. गाँधीजी, हिंद स्वराज, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 2018, पृष्ठ–19।
2. तुलसीदास, श्रीरामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, बालकाण्ड, पृष्ठ–141।
3. वही, पृष्ठ–149।
4. वही, उत्तरकाण्ड पृष्ठ–600।
5. वही, बालकाण्ड, पृष्ठ–121।
6. वही, उत्तरकाण्ड पृष्ठ–644।
7. वही, पृष्ठ–646।
8. वही, पृष्ठ–601।
9. वही, बालकाण्ड, पृष्ठ–37।
10. रामचंद्र रामचंद्र शुक्ल, गोस्वामी तुलसीदास, वाणी प्रकाशन, 2015, पृष्ठ–43।
11. वही, पृष्ठ–49।

❒❒❒